इकाई 13 निर्धनता तथा उसके सामाजिक प्रभाव

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 निर्धनता एक सामाजिक समस्या के रूप में

13.3 निर्धनता की परिभाषा एवं दृष्टिकोण

13.3.1 परिभाषा

13.3.2 दृष्टिकोण

13.4 निर्धनता के कारण

13.4.1 असमानता और निर्धनता

13.4.2 दुष्चक्र सिद्धांत

13.4.3 भौगोलिक पहलू

13.5 निर्धनता के परिणाम

13.5.1 निर्धनता और उसके परिणाम

13.5.2 निर्धनता की संस्कृति

13.5.3 भारत में ग़रीबी

13.5.4 आय वितरण में विषमता

13.6 ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रम

13.6.1 एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम तथा अन्य रोज़गार कार्यक्रम

13.6.2 महिला, युवा एवं क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम

13.7 सारांश

13.8 शब्दावली

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपके लिए संभव होगा :

- ग़रीबी का सामाजिक समस्या के रूप में वर्णन करना;
- निर्धनता की परिभाषा करना;
- निर्धनता के कारणों पर प्रभाव डाल पाना;

- निर्धनता और उसके परिणामों का विवेचन करना; और
- कुछ ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का परिचय देना।

13.1 प्रस्तावना

पिछले खंड में हमने औद्योगिक, ग्रामीण, महिला एवं बाल मज़दूरों जैसे विभिन्न वर्गों के श्रमिकों की सामाजिक समस्याओं का अध्ययन किया। इस खंड में हम वंचना एवं वैमुख्य के विभिन्न रूपों से जुड़ी समस्याओं की चर्चा करेंगे। इस खंड की पहली इकाई निर्धनता और उसके सामाजिक प्रभावों के बारे में है। इस इकाई में एक सामाजिक समस्या के रूप में निर्धनता का विश्लेषण किया गया है। हम निर्धनता की परिभाषा करने के साथ-साथ इसको आँकने के लिए श्रेणियाँ भी बताएँगे। इसके पश्चात् निर्धनता के कारणों, दुष्चक्र तथा भौगोलिक पहलुओं के परख की जाएगी। तत्पश्चात् ग़रीबी के परिणामों की जानकारी दी जाएगी। इसमें निर्धनता की संस्कृति, भारत में ग़रीबी और आय के वितरण में विषमता आदि शामिल हैं। इकाई के अंत में ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का परिचय दिया जाएगा, जिनमें एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम, रोज़गार कार्यक्रम, महिला और युवा क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम एवं शहरी क्षेत्र शामिल हैं।

13.2 निर्धनता एक सामाजिक समस्या के रूप में

सभी समाजों में पिछले लंबे समय से ग़रीबी रही है। तथापि, कुछ देशों में ग़रीबी की 'सीमा' कम है तो कुछ में अधिक है। प्रत्येक समाज में, चाहे वह कितना ही सम्पन्न क्यों न हो, ग़रीब लोग अवश्य होते हैं। बताया जाता है कि अमेरिका में ढाई करोड़ से भी अधिक व्यक्ति (12.15 प्रतिशत) ग़रीबी में जी रहे हैं। 1960 के दशक में आकर ही ग़रीबी की व्यापकता को स्वीकार किया गया। तब अमेरिका में "निर्धनता के विरुद्ध युद्ध" नाम से एक कार्यक्रम चलाया गया। इंग्लैण्ड में कई सौ वर्ष पहले सन् 1601 में ही ग़रीबों के लिए एक कानून पारित किया गया था। इस कानून में उन लोगों को रोज़गार देने के लिए एक कार्य केंद्र स्थापित करने का प्रावधान था, जिनके पास जीवन की बुनियादी ज़रूरतें पूरी करने का कोई भी साधन नहीं था। हालाँकि इस कार्य केंद्र में काम करने की स्थितियाँ तथा वेतन निराशाजनक थे, किन्तु इसे ग़रीबों की सरकारी तौर पर सहायता करने के विचार का शुभारंभ माना जा सकता है। तदनुसार, सम्पन्न देश अमेरिका में भी ग़रीबी है, किन्तु कुल मिलाकर वह अमीर देश है। दूसरी ओर, भारत में ग़रीबी एक मुख्य समस्या है। इस प्रकार निर्धनता एक सापेक्ष अवधारणा है। हमारे यहाँ ग़रीबी इतनी अधिक रही है कि इस ओर ज्यादा ध्यान दिया ही नहीं गया है। निर्धनता को किसी समाज का सामान्य पक्ष माना जाता था। हाल तक ग़रीबी से निपटने के प्रति सामाजिक दायित्व का बोध नदारद था। इसके विपरीत ग़रीबी को युक्तिसंगत सिद्ध करने के प्रयास होते रहे हैं। ऐसा माना जाता था कि ग़रीब लोग अपनी दुर्दशा के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। बेरोज़गारी को आलस्य को ही लक्षण माना जाता था। कर्म सिद्धांत में यह प्रतिपादित किया गया कि दरिद्रता यानी हमारे पिछले जन्म के पापों तथा दुष्कर्मों का फल है। किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं ग़रीबी का वरण किए जाने पर समाज उसकी सराहना करता था। किन्तु ऐसे मामलों में इसे निर्धनता नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह तो संन्यासी का जीवन अपनाने के लिए किया जाता है। महात्मा गाँधी ने स्वेच्छा से निर्धनता को अपनाया था। ऐसा ही महात्मा बुद्ध ने किया। यह स्थिति स्वाभाविक निर्धनता से भिन्न है, जिसमें व्यक्ति जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित रहता है।

वर्तमान समय में ग़रीबी को एक सामाजिक समस्या के रूप में स्वीकृति मिली है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में ग़रीबी के शिकार लोगों की आमदनी को बढ़ाने की दिशा में कुछ प्रयास किए गए हैं। 1960 में दाण्डेकर तथा रथ (1971) ने ग़रीबी की रेखा की अवधारणा को बल दिया। चौथी पंचवर्षीय योजना में ग़रीबी दूर करने के लिए विशेष कार्यक्रम चालू किए गए।

निर्धनता की समस्या का योजनाबद्ध अध्ययन हाल ही में प्रारंभ हुआ है। ऐसा माना गया है कि ग़रीबी को समझने के लिए चार प्रश्नों का हल ढूँढना ज़रूरी है :

i) ग़रीबी क्या है?

ii) ग़रीबी की सीमा कितनी है?

iii) ग़रीबी के कारण क्या हैं?

iv) समाधान क्या है?

तीसरे प्रश्न में यह भी जोड़ा जा सकता है कि ग़रीबी के परिणाम क्या हैं? इस इकाई में इन्हीं प्रश्नों के आधार पर निर्धनता का अध्ययन किया जाएगा। प्रयास यह होगा कि इसके समाजशास्त्रीय पहलुओं का विवेचन किया जाए।

13.3 निर्धनता की परिभाषा एवं दृष्टिकोण

इस भाग में निर्धनता की विभिन्न परिभाषाओं और दृष्टिकोणों की चर्चा की जा रही है। पहले हम निर्धनता की परिभाषा दे रहे हैं।

13.3.1 परिभाषा

निर्धनता की परिभाषा के लिए सामान्यतया आर्थिक दृष्टिकोण अपनाया जाता है, जिसमें आय, सम्पत्ति तथा रहन-सहन के स्तर शामिल हैं। उन लोगों को निर्धन माना जाता है, जिनकी आय इतनी नहीं होती कि वे रोटी, कपड़ा और मकान जैसी बुनियादी ज़रूरतें पूरी कर सकें। भारत तथा अमेरिका द्वारा अपनाई गई "ग़रीबी की रेखा" की अवधारणा में निश्चित आमदनी को ही रेखा निर्धारित किया गया। जो लोग उस रेखा से नीचे आते हैं, वे ग़रीब माने जाते हैं। ग़रीबी की रेखा का निर्धारण एकतरफा तौर पर किया जाता है, इसलिए इस अवधारणा पर आपत्ति की जा सकती है। फिर भी इससे यह तय करने का एक आधार तो मिलता ही है कि ग़रीब कौन हैं? घोर निर्धनता के लिए "कंगाली" शब्द इस्तेमाल किया जाता है। यह शब्द उन लोगों के लिए है जो अपना पेट पालने में असमर्थ हैं। आज के समय में ग़रीबी का अध्ययन करते हुए अनेक आयामों पर विचार किया जाता है। इसे केवल आर्थिक विषय नहीं माना जाता। अब यह अनुभव किया गया है कि ग़रीबी को समझने के लिए समाजशास्त्रीय, राजनीतिक, मनोविज्ञानिक तथा भौगोलिक कारणों के साथ-साथ दृष्टिकोणों और जीवन-मूल्य प्रणालियों पर भी विचार करना आवश्यक है।

हमारा विचार है कि किसी भी ऐसे समाज में, जो व्यापक विषमताओं से युक्त है, सरकार का न्यूनतम दृष्टिकोण न सिर्फ आय का बल्कि आत्म-सम्मान तथा सामाजिक गतिशीलता के अवसरों और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी का न्यूनतम स्तर बढ़ाने के प्रयास की ओर होना चाहिए। हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि ग़रीबी से निपटने के प्रयास में हमें केवल आमदनी पर ही नहीं बल्कि व्यक्ति की राजनीतिक भूमिका, उसके बच्चों के लिए अवसरों एवं उसके आत्म-सम्मान पर भी ध्यान देना होगा। निर्धनता आर्थिक अभाव की स्थिति-मात्र नहीं है, यह सामाजिक तथा राजनीतिक वंचना भी है। इसलिए ग़रीबी का अध्ययन केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं करना चाहिए, बल्कि उसके राजनीतिक एवं सामाजिक पहलुओं से भी किया जाना चाहिए। ई.एस.ओ.-02 की इकाई 12 में ग़रीबी की अवधारणाओं तथा दृष्टिकोणों का विस्तृत विवेचन किया गया है। उसमें हमने ग़रीबी को एक जीवन स्तर के रूप में प्रस्तुत किया है, जो इतना नीचे है कि वह मानव के सामाजिक, शारीरिक एवं मानसिक विकास में बाधक है। उसमें यह भी बताया गया है कि निर्धनता सदियों से मानव सभ्यता तथा संस्कृति का अंग

रही है। मानव समाज के विकास के प्रारंभिक चरण में सामाजिक संगठन तथा प्रौद्योगिकी के विकास का स्तर बहुत कम था और निर्धनता सामान्य प्रकार की थी, जो सारे समाज में व्याप्त थी। मानव समाज के विकास की प्रक्रिया में सामाजिक संगठन तथा प्रौद्योगिकी में बहुत प्रगति हुई है। परंतु इस प्रगति के लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से प्राप्त नहीं हुए हैं। इस कारण लोग अमीर भी बने हैं और ग़रीब भी बने हैं।

इस प्रकार ग़रीबी समाज के सामाजिक-आर्थिक ढाँचे से जुड़ी रही है। ग़रीबी के विशेषज्ञों ने मोटे तौर पर दो प्रकार से दृष्टिकोण अपनाए हैं। पहला है – पोषाहार दृष्टिकोण। इस दृष्टिकोण में न्यूनतम खाद्य आवश्यकताओं के आधार पर निर्धनता का आकलन किया जाता है। दूसरा दृष्टिकोण है – तुलनात्मक वंचन दृष्टिकोण। इस दृष्टिकोण में समाज के पूर्व-विकसित वर्गों की तुलना में किसी वर्ग में व्याप्त वंचना को ग़रीबी का मापदंड माना जाता है। निर्धनता के आकलन से संबंधित भाग में हम इन विषयों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

13.3.2 दृष्टिकोण

निर्धनता के आकलन के बारे में अनेक दृष्टिकोण हैं। निर्धनता के आकलन में सबसे प्रमुख कारक आमदनी है। अक्सर यह प्रश्न पूछा जाता है कि एक खास आमदनी से क्या-क्या साधन जुटाए जा सकते हैं? क्या उस आमदनी से बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा कर पाना संभव है? इस कारण यह भी राय व्यक्त की गई है कि किसको कितना और कैसा भोजन मिलता है, इसको निर्धनता की कसौटी माना जाए। यदि कोई वयस्क व्यक्ति प्रतिदिन एक निश्चित मात्रा में कैलोरी (2,250) नहीं ले पाता, तो वह वयस्क व्यक्ति ग़रीब माना जाएगा। आर्थिक पहलू सामान्य तौर पर मूलभूत आवश्यकताओं के निर्धारण पर आधारित है और इसका उल्लेख उन साधनों के संदर्भ में किया जाता है, जो स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्षमता को बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। किन्तु इस प्रकार के दृष्टिकोण को अब सही नहीं माना जा सकता है। बुनियादी आवश्यकताओं में शिक्षा, सुरक्षा, आराम तथा मनोरंजन भी शामिल हैं। जिन व्यक्तियों के पास इतने कम संसाधन हों कि वे समाज की जीवन पद्धतियों, रिवाज़ों तथा गतिविधियों से वंचित रहते हों, उन्हें ग़रीब माना जाता है। जिन पद्धतियों से निर्धनता का निष्पक्ष तथा विश्वसनीय आकलन संभव है, उनमें से एक है जीवन सूचकांक का भौतिक स्तर (Physical quality of lite index) यानी पी.क्यू.एल.आई.। इस अवधारणा में तीन सूचक इस्तेमाल किए जाते हैं। ये हैं : औसत आयु, शिशु मृत्यु तथा साक्षरता। इन क्षेत्रों में प्रत्येक देश की उपलब्धियों के आधार पर सभी देशों के बीच एक सूचकांक निर्धारित किया जाना चाहिए। सबसे कम उपलब्धि के लिए शून्य तथा सबसे अच्छी उपलब्धि के लिए 100 सूचकांक रहेगा। 1970 के दशक में भारत के लिए पी.क्यू.एल.आई. 43 था। भारत में निर्धनता के आकलन के लिए अनेक अध्ययन किए गए हैं। उदाहरण के लिए, ओझा ने अपने अध्ययन में कैलोरी की औसत प्राप्ति की निर्धनता के आकलन का मापदंड बनाया। उनके अनुसार जो व्यक्ति प्रतिदिन 2,250 प्रति व्यक्ति के कम कैलोरी लेते हैं, वे ग़रीबी की रेखा से नीचे हैं। दाण्डेकर तथा रथ (1971) ने कैलोरी (2,250) का मूल्य 1960-61 में कीमतों के आधार पर तय किया। उनकी राय है कि वित्तीय सूचकांक के हिसाब से ग्रामीण तथा शहरी निर्धनता की सीमा में अंतर होता है। उनका कहना है कि योजना आयोग ने प्रति व्यक्ति 20 रुपये प्रति माह अथवा 240 रुपये प्रति वर्ष आय को आमदनी का न्यूनतम वांछित स्तर स्वीकार किया है, किन्तु शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों पर इस राशि को लागू करना उचित न होगा। उन्होंने 1960-61 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए न्यूनतम स्तर 180 रुपये तथा अधिकतम स्तर 270 रुपये प्रति वर्ष तय किया।

i) चरम निर्धनता

चरम निर्धनता से अभिप्राय है किसी व्यक्ति अथवा परिवार की जीवन की बुनियादी आवश्यकताएँ जुटा पाने में असमर्थता। इसका अर्थ है भौतिक आवश्यकताओं का घोर अभाव, भूखमरी, कुपोषण, आश्रय तथा कपड़ों की कमी, चिकित्सा सुविधाओं से पूर्णतया वंचित रहना। "चरम निर्धनता" को कभी-कभी "अस्तित्व निर्धनता" भी कहा जाता है क्योंकि यह जीवित रहने की न्यूनतम आवश्यकताओं के आकलन पर आधारित है। पौष्टिकता का आकलन कैलोरी तथा प्रोटीन की मात्रा से, आश्रय का आकलन मकान के स्तर तथा उसमें रहने वाले लोगों की संख्या, तथा शिशु मृत्युदर और चिकित्सा सुविधाओं के स्तर से किया जाता है। निर्धनता की परिभाषा को व्यापक बनाए जाने के बाद यह भी कहा जा रहा है कि भौतिक आवश्यकताओं से आगे जाकर सांस्कृतिक आवश्यकताओं – शिक्षा, सुरक्षा तथा मनोरंजन को भी इसमें शामिल किया जाना चाहिए। "चरम निर्धनता" की अवधारणा में जीवित रहने की जिन न्यूनतम आवश्यकताओं पर ध्यान दिया जाता है, वे सभी लोगों के लिए समान हैं।

यह तक पूरी तरह से स्वीकार कर पाना कठिन है। किसी कृषि मज़दूर की भोजन संबंधी आवश्यकताएँ किसी क्लर्क की आवश्यकताओं से भिन्न होंगी। इसी प्रकार कपड़े की ज़रूरतों में भी भिन्नता होगी। यदि सांस्कृतिक आवश्यकताओं को भी शामिल करें, तो मापदंड और जटिल हो जाएँगे। इन सभी दृष्टिकोणों में निर्धनता की अवधारणा की समझ का व्यापकीकरण तथा निर्धनता के आकलन में कठिनाई भी शामिल है।

कोष्ठक 13.01

भारत में 1947 के बाद हुई प्रगति इतिहास में द्वितीय है। किन्तु अन्य विकासशील देशों के मुकाबले यह प्रक्रिया धीमी और कष्टपूर्ण रही है। पिछले 40 वर्षों में निर्धनता में भी वृद्धि हुई है। प्रश्न कुछ हिस्सों में मौजूद ग़रीबी का नहीं है, बल्कि समूचे देश में बड़ी संख्या में ग़रीबी की रेखा से नीचे रह रहे लोगों का है।

ग़रीबी की रेखा का निर्धारण सामान्यतया जीवित रहने तथा काम कर सकने के लिए आवश्यक कैलोरी की प्रतिदिन न्यूनतम प्राप्ति (2400) के आधार पर किया जाता है। इसलिए इसमें जीवित रहने की अन्य आवश्यकताएँ जैसे कि मकान, कपड़ा, स्वास्थ्य तथा शिक्षा शामिल नहीं हैं। इस प्रकार यह वाकई एकदम न्यूनतम है।

ii) तुलनात्मक निर्धनता

"चरम निर्धनता" को पूर्णतया स्वीकार करना कठिन है, इसलिए "तुलनात्मक निर्धनता" की नई अवधारणा विकसित हुई है। इस अवधारणा के अनुसार किसी स्थान तथा समय विशेष में जीवन स्तर के अनुसार निर्धनता का आकलन किया जाता है। भाव यह है कि समाज के जीवन स्तर के मानक बदलते रहते हैं, इसलिए निर्धनता की परिभाषा भी इन बदलते हुए मानकों के अनुसार बदलती रहनी चाहिए। अत: निर्धनता की परिभाषा बदलते हुए समाजों की आवश्यकताओं तथा माँगों से जुड़ी होनी चाहिए। 1960 में 20 रुपये या उससे कम की प्रति व्यक्ति मासिक आय वाले लोग ग़रीबी की रेखा से नीचे माने जाते थे। 1990 में जिन लोगों की मासिक आय 122 रुपये से कम है, वे ग़रीबी की रेखा से नीचे माने जाते हैं। "तुलनात्मक निर्धनता" में यह तथ्य भी निहित है कि विभिन्न समाजों के मानक भिन्न होते हैं, अत: निर्धनता का सार्वभौमिक मापदंड तय करना असंभव है। अमेरिका में वहाँ के मानकों के हिसाब से लोग निर्धन माने जाते हैं, वे भारत में ग़रीब नहीं होंगे।

बोध प्रश्न 1

1) निर्धनता की परिभाषा कैसे की जा सकती है? अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) निर्धनता के प्रति न्यूनतम दृष्टिकोण क्या है? अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

13.4 निर्धनता के कारण

दक्षिण एशिया में मानव विकास, 1999 आमतौर पर दक्षिण एशिया में और खास तौर पर भारत में ग़रीबी, असमानता और वंचना की सुस्पष्ट स्थिति दर्शाता है। इस रिपोर्ट के अनुसार, विश्व जनसंख्या के 23% वाला दक्षिण एशिया इस धरती पर सबसे ग़रीब क्षेत्र है। इस भूभाग की 45% जनसंख्या, यथा लगभग 54 करोड़ लोग ग़रीबी की रेखा से नीचे रहते हैं, जिनकी दैनिक आय एक अमेरिकी डॉलर से भी कम है। ग़रीब लोगों की संख्या भारत में सर्वाधिक है, यथा 1999 में 53% लोग ग़रीबी की रेखा से नीचे थे (यानी उनकी आय प्रतिदिन एक अमेरिकी डॉलर से भी कम थी)। उक्त रिपोर्ट यह भी दर्शाती है कि धनाढ्यतम सदस्यों के बीच धन-सम्पत्ति और शक्ति का नाटकीय नैराश्य और संकेन्द्रण है। इस क्षेत्र में 20% सर्वोच्च आय वाले स्तर के पास कुछ आय का 40% है, जबकि निम्नतम आय वाले 20% के पास मात्र 10% ही। भारत में 10% धनाढ्यतम लोग देश के 10% निर्धनतम लोगों से 6 गुना अधिक कमाते हैं।

ग़रीबी का सामाजिक एवं आर्थिक वंचनों के साथ सीधा संबंध है। इन वंचनाओं के कुछ सूचक नीचे दशयि गए हैं :

सूचक	दक्षिण एशिया	भारत
उचित स्वास्थ्य-रक्षक सुविधाओं से वंचित	87.9 करोड़	66.1 करोड़
स्वच्छ पेय जल से वंचित	27.8 करोड़	17.8 करोड़
शिशु-जन्म मृत्युदर प्रति 1,00,000 सप्राण जन्म	480	437
घोर कुपोषण से ग्रस्त 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे	7.9 करोड़	5.9 करोड़
प्राथमिक शिक्षा में नाम न लिखाने वाले बच्चे	5 करोड़	3.5 करोड़

निर्धनता के अनेक कारण हैं। हम इस भाग में तथा बाद के उप-भागों में इन कारणों की चर्चा कर रहे हैं। पहला कारण है – असमानता और निर्धानता के बीच संबंध। इसके पश्चात् दुष्चक्र सिद्धांत और अंत में भौगोलिक पहलुओं का विवेचन किया जायेगा।

13.4.1 असमानता और निर्धनता

प्रारंभ में सिर्फ निर्धनता के अध्ययन के ही प्रयास हुए, अर्थात् उसे समाज की स्थितियों से जोड़कर नहीं देखा गया। एक ब्रिटिश समाज कल्याण विशेषज्ञ ने सुझाव दिया की निर्धनता को अपर्याप्त आय के रूप में परिभाषित नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि किसी समाज में सम्पत्ति के बँटवारे में विषमता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। मार्क्स के अनुसार विषमता पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में पैदा होती है, जिसमें सम्पत्ति थोड़े से लोगों के हाथों में सिमट कर रह जाती है। ये मुट्ठीभर लोग सम्पत्ति उत्पादन के साधनों, जैसे कि दास, भूमि तथा पूँजी पर अपना कब्जा जमा लेते हैं। वे राजनीतिक प्रक्रिया को भी प्रभावित करने में सक्षम होते हैं, ताकि इस सामाजिक असमानता को कायम रखा जा सके। चूँकि राजनीतिक रूप से अमीर लोगों के पास शक्ति होती है, इसलिए सरकारी नीतियाँ उनका ही पक्ष पोषण करती हैं। इसी कारण अमीर लोग अमीर तथा ग़रीब लोग ग़रीब ही बने रहते हैं। मार्क्स का कहना था कि समूचा मानव इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। इसलिए हालात तभी बदल सकते हैं जब ग़रीबों के पास अधिक राजनीतिक प्रभाव आ जाए।

कुछ अन्य विचारकों का मानना है कि समाज के सदस्यों को अपनी अलग-अलग भूमिका निभानी होती है। कुछ भूमिकाओं के लिए लंबे प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है (चिकित्सक, इंजीनियर, वकील, वैज्ञानिक आदि) वे लोग समाज से अधिक लाभ प्राप्त करते हैं। सब्ज़ी-विक्रेता, सफ़ाई कर्मचारी, टैक्सी-ड्राइवर, टाइपिस्ट, जैसे लोगों को कम पारिश्रमिक मिलता है। असमानता तो है, किन्तु क्योंकि समाज के संचालन के लिए ही ऐसा होता है अत: इसे वृत्तिमूलक माना जाता है। समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ये सभी काम किए ही जाने हैं।

13.4.2 दुष्चक्र सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार निर्धन लोग ऐसी परिस्थितियों में फँसे हुए हैं, जो ग़रीबी से उनकी मुक्ति को कठिन बना देती हैं। ग़रीबों को कम भोजन मिलता है, जिससे कम ऊर्जा मिलने के कारण स्कूल तथा काम में वे बढ़िया नहीं निकलते। घटिया तथा कम भोजन के कारण वे जल्दी-जल्दी बीमार पड़ते हैं। उनके मकानों की हालत ठीक नहीं होती तथा अक्सर अपने काम के लिए उन्हें बहुत दूर जाना पड़ता है। अपने काम के स्थान के समीप मकान लेने में वे या तो असमर्थ होते है या उन्हें वहाँ रहने की अनुमति ही नहीं होती। ये सभी परिस्थितियाँ मिलकर उन्हें ग़रीब बने रहने को विवश करती हैं। ग्रामीण विकास के एक अग्रणी विशेषज्ञ ने भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त निर्धनता की चर्चा करते हुए यह प्रश्न किया : "क्या ग्रामीण विकास की नीति में समन्वित ग्रामीण निर्धनता पर विचार किया जाता है?" इसके पहलुओं में ग़रीबी, शारीरिक दुर्बलता, असुरक्षा, लाचारी, एकाकीपन आदि शामिल हैं। जैसे कि इस सिद्धांत में कहा गया है, ग़रीब लोग निर्धनता के चंगुल से मुक्त नहीं हो सकते। किन्तु इस तरह के नियतिवादी विचार को कि वे निर्धनता से बच ही नहीं सकते, स्वीकार करना मुश्किल है। निर्धनता की इस व्याख्या को "स्थितिपरक सिद्धांत" भी कहा जाता है। ऐसा इसलिए कि निर्धन स्वयं को विशेष स्थिति में पाते हैं, जिसमें से यदि वे निकलना भी चाहें तो उनका निकलना बहुत कठिन होता है।

13.4.3 भौगोलिक पहलू

कभी-कभी निर्धनता की व्याख्या उन भौगोलिक स्थितियों के संदर्भ में की जाती है, जिनमें ग़रीब लोग रहते हैं। संसाधनों की कमी है और संसाधनों की कमी की इस समस्या से उबर पाने में लोग असमर्थ हैं। रेगिस्तानी तथा पहाड़ी क्षेत्र इस पहलू के अच्छे उदाहरण हैं। भारत में कुछ इलाकों को सूखा क्षेत्र घोषित किया गया है। इन क्षेत्रों में किए गए सर्वेक्षणों से पता चलता है कि वहाँ न केवल हालात खराब हैं, बल्कि कड़ा परिश्रम करने के बावजूद भी वहाँ के लोग अपनी दशा नहीं सुधार पाते हैं।

इनमें से कोई भी सिद्धांत निर्धनता के व्यापक तथ्य की पूरी तरह व्याख्या करने में असमर्थ है। हाँ, इनसे यह समझने में अवश्य मदद मिलती है कि ग़रीबी क्यों व्याप्त है?

13.5 निर्धनता के परिणाम

जैसा कि पहले कहा गया है सम्पन्न लोगों में अमीर बने रहने की शक्ति होती है। निर्धनता को जारी रखने में उनका स्वार्थ निहित होता है। ग़रीबी बनी रहती है क्योंकि समाज के कुछ वर्गों के लिए यह लाभप्रद है। ग़रीबी से सभी गैर-ग़रीब तबकों तथा अमीर और शक्तिशाली लोगों को खास तौर पर लाभ होता है। ग़रीबी के अनेक प्रकार्य हैं। जैसे –

i) निर्धनता यह सुनिश्चित करती है कि "गंदे काम हो जाएँगे"। बहुत से छोटे काम होते हैं, जिन्हें समाज में किया जाना होता है। ऐसे काम ग़रीब ही करते हैं।

ii) ग़रीबी के कारण घटिया वस्तुओं तथा सेवाओं के लिए बाज़ार उपलब्ध होता है। उतरे हुए कपड़े, बासी खाद्य वस्तुएँ, घटिया मकान तथा अयोग्य लोगों द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाएँ ग़रीब ही इस्तेमाल करते हैं।

iii) ग़रीबी के कारण अमीरों का जीवन सुखी बनता है। रसोइयों, मालियों, धोबियों, चौका-सफ़ाई करने वालों आदि की मदद से धनी लोग सुखी जीवन बिता सकते हैं।

iv) निर्धनता से एक ऐसा वर्ग पनपता है, जो परिवर्तन के राजनीतिक तथा आर्थिक कारणों को आत्मसात कर लेता है। प्रौद्योगिकी के विकास का अर्थ अकुशल लोगों की बेरोज़गारी में वृद्धि। बाँधों के निर्माण से ऐसे क्षेत्र ऐसी आबादियाँ बेदखल होती हैं, जहाँ नहरें बनाई जाती हैं। बेदखल भूमिहीन लोगों को कोई मुआवजा नहीं मिलता। बजट में धन की कमी के कारण जिन नीतियों में परिवर्तन होता है, वे जन-कल्याण कार्यक्रमों के बारे में ही होती हैं। निर्धनता को बनाए रखने में सम्पन्न लोगों का और प्राय: स्वयं सरकार का भी निहित स्वार्थ होता है, क्योंकि इससे समाज की स्थिरता बनाए रखने में योगदान मिलता है।

बोध प्रश्न 2

1) निर्धनता के कारण क्या हैं? अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) निर्धनता के क्या-क्या प्रकार्य हैं? अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5.1 निर्धनता और उसके परिणाम

नीचे के उप-भाग में निर्धनता तथा उसके परिणामों की चर्चा की जा रही है। सबसे पहले निर्धनता की संस्कृति का विवेचन किया जा रहा है। हमने यह विवेचन भारत में ग़रीबी के संदर्भ में किया है। अंत में आय के वितरण में असमानता पर चर्चा की जाएगी।

13.5.2 निर्धनता की संस्कृति

पिछले अनुच्छेदों में ग़रीबी के कारणों का विश्लेषण किया गया है। ढाँचागत अथवा दुष्चक्र सिद्धांत में यह माना गया है कि ग़रीबों को अपनी स्थिति से बाहर निकलना लगभग असंभव लगता है। फिर लोग इन कष्टपूर्ण स्थितियों में जीते कैसे हैं? एक व्याख्या यह है कि निर्धनता उन्हें आचरण की ऐसी पद्धतियाँ विकसित करने के लिए विवश करती है, जिनके बल पर वे ग़रीबी की शोचनीय स्थितियों में भी जी लेते हैं? आचरण की इस पद्धति को "निर्धनता की संस्कृति" नाम दिया गया है। यह अवधारणा एक मानव-विज्ञानी ऑस्कर लेविस ने मेक्सिको में अपने अध्ययन के आधार पर विकसित की। उनका कहना है कि ग़रीब लोग अपनी अलग संस्कृति बल्कि उप-संस्कृति विकसित कर लेते हैं, जो उस समाज की मूल्य व्यवस्था अथवा आचरण पद्धति का अंग नहीं होती, जिसमें वे रहते हैं। लेविस के अनुसार ग़रीब सामाजिक दृष्टि से अलग-थलग होते जाते हैं। परिवार के सिवाय, चाहे वे किसी भी वर्ग से संबंधित हों, उनका दृष्टिकोण संकुचित रहता है। वे स्वयं को न तो अपने समाज से जोड़ते हैं और न देश के अन्य भागों के निर्धन लोगों से। इस संस्कृति में पलने वाले व्यक्ति में भाग्यवाद, असहायता, पर-निर्भरता तथा हीनता के भाव कूट-कूटकर भरे होते हैं। वे वर्तमान के लिए ही चिंतित रहते हैं, भविष्य के बारे में सोच ही नहीं पाते। संक्षेप में कहा जा सकता है कि निर्धनता की संस्कृति ग़रीबों द्वारा अभाव की स्थिति के अनुकूल स्वयं को ढालने की प्रक्रिया भी है और प्रतिक्रिया भी। यह निराशा तथा हताशा की भावना से उबरने का प्रयास है, क्योंकि ग़रीब को इस बात का एहसास है कि उच्च समाज के मूल्यों के अनुसार उसके लिए सफलता प्राप्त करना लगभग असंभव है। उनके अलग-थलग पड़ने का अर्थ है समाज की राजनीतिक सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी का अभाव। यह भी कहा जाता है कि बच्चों को इसी संस्कृति में संस्कारित किया जाता है, जिससे वे अपनी स्थिति सुधारने से अवसरों का लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि वे नई स्थिति में स्वयं को असुरक्षित महसूस करते हैं।

इस अवधारणा की कई तरह से आलोचना की गई है। एक प्रश्न यह है कि क्या निर्धनता की संस्कृति की अवधारणा ग्रामीण परिस्थितियों पर भी लागू होती है? लेविस ने अपनी अवधारणा स्लम क्षेत्रों में किए गए अध्ययनों के आधार पर विकसित की है। इस बात के कुछ सबूत मिलते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी ग़रीब लोगों ने अपने इर्द-गिर्द उपसंस्कृति तथा सुरक्षा तंत्र के कारण नहीं, बल्कि इसलिए शरीक नहीं होते क्योंकि समाज एक प्रकार से उन्हें इससे रोकता है। सामाजिक संस्थाओं में भागीदारी के लिए साधनों के एक निश्चित स्तर की आवश्यकता होती है, जो निर्धन लोगों के पास नहीं होते (उदाहरण के लिए, धार्मिक आयोजन)। इस अवधारणा में एक दोष यह है कि इसमें ग़रीबी होने के लिए ग़रीबों को ही दोषी ठहराया गया है और सामाजिक प्रणाली को इसके लिए ज़िम्मेदार नहीं माना गया है। पहले हम यह चर्चा कर चुके हैं कि समाज में विषमता को किस प्रकार पुष्ट किया जाता है। उसमें यह भी कहा गया है कि निर्धनता की संस्कृति ग़रीबी का कारण नहीं बल्कि उसका परिणाम है।

सोचिए और करिए 2

किसी कुम्हार, धोबी या बर्तन माँजने वाली के घर जाइए। उनसे पूछिए कि क्या उनकी कोई मित्र मंडली है? निर्धनता की संस्कृति का पता लगाने का प्रयास कीजिए। अपने अनुभव को दो पृष्ठों में लिखिए तथा अपने अध्ययन केंद्र में अन्य विद्यार्थियों के साथ उस पर विचार-विमर्श कीजिए।

13.5.3 भारत में ग़रीबी

1960 के आसपास जब से दाण्डेकर तथा रथ ने ग़रीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोगों की संख्या की ओर ध्यान आकर्षित किया, तब से भारत में ग़रीबी पर काफी विचार हुआ है। उस समय उन्होंने अनुमान लगाया था कि यदि प्रति व्यक्ति प्रतिमाह आय 20 रुपये से कम हो तो वह व्यक्ति ग़रीबी की रेखा से नीचे माना जाएगा। शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आय की राशि अलग-अलग बताई गई है। (बम्बई के लिए 1990 में यह राशि 200 रुपये प्रतिमाह बताई गई।) यह राशि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2400 कैलोरी खरीदने के लिए आवश्यक धन के आधार पर आँकी गई है। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए यह राशि 1988 में 122 रुपये थी।

ग्रामीण क्षेत्रों में ग़रीबी की रेखा से नीचे के लोगों की संख्या के संबंध में भिन्न-भिन्न अनुमान हैं। 1977-78 में यह आँका गया कि 51 प्रतिशत ग्रामीण आबादी (25 करोड़ 20 लाख) ग़रीबी की रेखा से नीचे है। 1987-88 में यह अनुमान लगाया गया कि लगभग 45 प्रतिशत ग्रामीण जनता (26 करोड़ 10 लाख) ग़रीबी की रेखा से नीचे थी। यद्यपि प्रतिशत की दृष्टि से कमी आई, किन्तु जनसंख्या में वृद्धि के कारण कुल संख्या के हिसाब से ग़रीबी की रेखा के नीचे रहने वालों में बढ़ोत्तरी हो गई। संख्या के बारे में अलग-अलग अनुमान होने के बावजूद यह सर्वमान्य तथ्य है कि ग़रीबी के शिकार लोगों की संख्या बहुत अधिक है। शहरों में ग़रीबी से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या 1987-88 में 7 करोड़ 70 लाख (प्रतिशत) आँकी गई। 1990 में ग्रामीण तथा शहरी दोनों तरह के क्षेत्रों में ग़रीबी की रेखा से नीचे के लोगों की संख्या लगभग 35 करोड़ बताई गई है।

तालिका 1 : ग्रामीण-शहरी स्थिति द्वारा ग़रीबी व्याप्तता अनुपात : सम्पूर्ण भारत और 14 प्रमुख राज्य (1993-94 से 1999-2000) (ग़रीबी की रेखा से नीचे जनसंख्या का प्रतिशत)

राज्य	ग्रामीण		शहरी	
	1993-94	**1999-2000**	**1993-94**	**1999-2000**
सम्पूर्ण भारत	39.36	36.35	30.37	28.76
आन्ध्र प्रदेश	27.97	25.48	35.44	32.28
असम	58.25	61.78	10.13	12.45
बिहार	64.41	58.85	45.03	45
गुजरात	28.62	26.22	28.86	21.7
हरियाणा	30.52	14.86	13.4	13.79
कर्नाटक	37.73	38.5	32.41	24.55
केरल	33.95	26.5	28.2	31.89
मध्य प्रदेश	36.93	39.35	46.02	46.29
महाराष्ट्र	50.21	50	33.52	32.16
उड़ीसा	59.12	62.67	36.99	34.27
पंजाब	17.61	14.24	6.79	6.74
राजस्थान	25.92	15.01	30.6	24.36
तमिलनाडु	37.27	39.37	37.83	29.82
उत्तर प्रदेश	39.08	29.87	34.23	36.39
पश्चिम बंगाल	54.15	56.16	20.97	16.74

टिप्पणियाँ : 1993-94 के लिए राज्य विशिष्ट ग़रीबी रेखाओं को कृषि-श्रमिक उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (ग्रामीण जनसंख्या के लिए और उद्योग-श्रमिक उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (शहरी जनसंख्या के लिए) का संदर्भ लेकर मुद्रास्फीति हेतु समायोजित किया गया है।

स्रोत : सुन्दरम्, के., 'इम्प्लॉयमण्ट एण्ड पॉवर्टी इन 1990'ज़ : फदर रिज़ल्ट्स फ्रॉम एन. एस.एस. 55थ राउण्ड इम्प्लॉयमण्ट-अनइम्प्लॉयमण्ट सर्वे', 1999-2000, *इकान्मिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली*, 11 अगस्त 2001, पृष्ठ 3039-49।

हाल के वर्षों में अखिल भारतीय स्तर पर ग़रीबी की रेखा से नीचे रहने वाले लोगों के अनुपात में गिरावट आयी है। तथापि, राज्यों के बीच अनेक क्षेत्रीय भिन्नताएँ हैं। पुन:, कुछ राज्यों में जबकि शहरी ग़रीबी का विस्तार कम हुआ है, ग्रामीण ग़रीबी बढ़ी है। उदाहरण के लिए, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु तथा पश्चिम बंगाल में। तथापि, हरियाणा व केरल के मामले में जबकि ग्रामीण ग़रीबी घटी है, शहरी ग़रीबी अंशत: बढ़ी है। असम और मध्य प्रदेश के उदाहरण में, ग्रामीण व शहरी दोनों ही क्षेत्रों में ग़रीबी का विस्तार बढ़ा है।

13.5.4 आय वितरण में विषमता

आय के वितरण में घोर विषमता मौजूद है। ग्रामीण क्षेत्रों में कुल आय में नीचे के 20 प्रतिशत लोगों का हिस्सा केवल 4 प्रतिशत है, जबकि ऊपर के 10 प्रतिशत लोगों का 36 प्रतिशत आय पर अधिकार है। इसी प्रकार, शहरों में नीचे के 20 प्रतिशत लोगों का हिस्सा मात्र 9 प्रतिशत है, जबकि ऊपर के 10 प्रतिशत लोगों का हिस्सा 42 प्रतिशत है। यह स्थिति अमीरों तथा ग़रीबों के बीच मौजूद चौड़ी खाई की द्योतक है। उपभोग व्यय के मामले में भी यही स्थिति दिखाई देती है। देश में ऊपर के 20 प्रतिशत लोग 42 प्रतिशत भाग का उपभोग करते हैं, जबकि नीचे के 20 प्रतिशत लोग केवल 10 प्रतिशत उपभोग के हकदार हैं। भूमि वितरण की पद्धति से भी "सम्पन्न" तथा "विपन्न" के बीच व्यापक अंतर की पुष्टि होती है। देश की कुल कृषि योग्य भूमि का 50 प्रतिशत हिस्सा लगभग 15 प्रतिशत किसानों के पास है, जबकि 50 प्रतिशत किसानों के हाथों में 20 प्रतिशत से भी कम भूमि है। यद्यपि आँकड़ों की पूर्ण सत्यता पर आपत्ति की जा सकती है, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं है कि संपदा, आय, भूमि तथा उपभोग के बँटवारे के मामले में घोर असंतुलन व्याप्त है।

धन-सम्पत्ति के दोषपूर्ण बँटवारे के फलस्वरूप एक-तिहाई जनसंख्या के पास इतने साधन भी नहीं रहते कि वे अपनी बुनियादी जरूरतें पूरी कर पाएँ। इसका सीधा परिणाम यह निकलता है कि बड़ी संख्या में लोग या तो ग़रीबी की रेखा से नीचे अथवा इस रेखा के करीब जीवन बिताने को विवश हैं और दूसरी ओर थोड़े से लोग धन-सम्पत्ति जमा कर रहे हैं। इस स्थिति को देखते हुए यह आशंका होती है कि गरीब तथा अमीर का यह अंतर क्या कभी दूर हो भी पाएगा? उत्पादन के साधनों – सम्पत्तियों, भूमि, स्वामित्व तथा अतिरिक्त साधनों के असमान वितरण से ग़रीबी पैदा होती है तथा आर्थिक, राजनीतिक और नौकरशाही ताकतों एवं निहित स्वार्थों से बने सत्ता ढाँचे के द्वारा इसे बराबर पुष्ट किया जाता है। निर्धनता के कारणों की चर्चा करते हुए असमानता को एक प्रमुख कारण बताया गया था। इसी प्रकार निर्धनता केवल आर्थिक विषय नहीं है, बल्कि इसके राजनीतिक तथा समाजशास्त्रीय आयाम भी हैं।

13.6 ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रम

भारत में योजना प्रक्रिया में घोर ग़रीबी को हमेशा ध्यान में रखा जाता है। पहले ही योजनाओं में इस समस्या से परोक्ष रूप से अर्थात् सकल राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि, भूमि सुधारों, सेवाओं की

व्यवस्था, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम आदि कि माध्यम से निपटने का दृष्टिकोण अपनाया गया। छठी पंचवर्षीय योज़ना में आकर ग़रीबी हटाने के लिए विशेष कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। किन्तु यह माना जाता है कि समस्या इतनी गहरी और व्यापक है कि इसे ऐसे किसी विशेष कार्यक्रम से हल करना सरल नहीं है। सातवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज़ में कहा गया है : "ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को देश के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। विशिष्ट ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के ज़रिए निर्धनता पर सीधे हमले की वर्तमान कार्यनीति इसलिए सही है क्योंकि आर्थिक प्रगति के लाभ ग़रीबों तक नहीं पहुँच रहे हैं। यह बात माननी होगी कि यदि अर्थव्यवस्था के विकास की गति धीमी होगी और इस विकास के लाभों का बँटवारा असमान रहेगा तो ग़रीबी दूर करने की यह कार्यनीति न तो अधिक समय तक चली पाएगी और न ही इसके अपेक्षित परिणाम मिलेंगे। .... ढाँचे में परिवर्तन, शिक्षा के विकास, चेतना तथा सोच में परिवर्तन और लोगों के दृष्टिकोण को गतिशील बनाने जैसे उपायों के ज़रिए सामाजिक परिवर्तन लाए बिना निर्धन वर्गों का आर्थिक उत्थान संभव नहीं है।"

यहाँ जिन विशिष्ट कार्यक्रमों का उल्लेख किया जा रहा है उन्हें ऊपर के वक्तव्य के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। यहाँ बताए जा रहे कार्यक्रम सातवीं पंचवर्षीय अवधि में लागू थे।

13.6.1 एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम तथा अन्य रोज़गार कार्यक्रम

एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम 1970 के दशक के अंतिम वर्षों में शुरू किया गया था। इस कार्यक्रम का लक्ष्य दो मुख्य उद्देश्यों के लिए एक व्यावहारिक एकीकृत कार्यनीति विकसित करना था। एक उद्देश्य था देश के विभिन्न विकास खंडों में भूमि, बिजली और पानी का बेहतर इस्तेमाल करके कृषि और उससे जुड़े क्षेत्रों में उत्पादकता बढ़ाना और दूसरा उद्देश्य था देश के विभिन्न खंडों में निर्धन वर्गों की आय और संसाधनों में वृद्धि करना।

एकीकृत करने का अर्थ है विशिष्ट कार्यक्रमों या क्षेत्र कार्यक्रमों को एक साथ लाना। उदाहरण के लिए, लघु किसान विकास, सीमांत किसान तथा खेतिहर मज़दूर कार्यक्रम और सूखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम। यह कार्यक्रम अति निर्धन लोगों, अर्थात् जिनकी पारिवारिक आय 4,800 रुपये निर्धारित हो, तो इतनी आमदनी वाले लोग अति निर्धन की श्रेणी में कैसे आ सकते हैं? कार्यक्रम के अंतर्गत चलाई जाने वाली विशिष्ट गतिविधियाँ निर्धारित समूहों की आवश्यकताओं के अनुरूप थीं। जैसे कि विशेष चावल कार्यक्रम, दुग्ध उत्पादन बढ़ाने का कार्यक्रम (operation flood), हथकरघा कार्यक्रम, रेशम उत्पादन आदि। इसके अंतर्गत उद्योगों, सेवाओं तथा व्यापार में वृद्धि के प्रयास किए जाने थे। वित्तीय सहायता अनुदान और ऋणों के रूप में दी गई।

बेरोज़गारी ग़रीबी का महत्त्वपूर्ण पहलू है। ग्रामीण क्षेत्रों में खेतिहर मज़दूरों को केवल फसल के मौसम में काम मिलता है। बेरोज़गारों की दर में निरंतर वृद्धि होती जा रही है। 1971 में लगभग 35 लाख लोग बेरोज़गार थे। 1983 में यह संख्या बढ़कर 45 लाख हो गई। इस समय देश के रोज़गार दफ्तरों में करीब तीन करोड़ व्यक्तियों के नाम दर्ज हैं। इसलिए ग़रीबी की समस्या से निपटने में रोज़गार के अवसर बढ़ाना एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है।

इन क्षेत्रों में शुरू किए गए कार्यक्रम हैं : राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोज़गार गारंटी कार्यक्रम। 1980 के दशक के दूसरे भाग में एक अन्य कार्यक्रम 'जवाहर रोज़गार योजना' का शुभारंभ किया गया। राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम में प्रति वर्ष 30 से 40 करोड़ कार्य-दिवसों का रोज़गार जुटाने का लक्ष्य तय किया गया। इसके अंतर्गत सिंचाई के लिए नहरों, सामाजिक वानिकी, मृदा संरक्षण, सड़कों, विद्यालय की इमारतों, पंचायत घर आदि के निर्माण का प्रावधान था। ग्रामीण भूमिहीन रोज़गार गारंटी कार्यक्रम गाँवों में रहने वाले भूमिहीन लोगों को रोज़गार देने के उद्देश्य से चलाया गया। इस कार्यक्रम में प्रत्येक ग्रामीण भूमिहीन परिवार के कम से कम एक व्यक्ति को 100 दिनों के लिए रोज़गार देने और निर्माण

कार्य चलाने का प्रावधान किया गया। इन कार्यक्रमों के अंतर्गत अन्य कार्यों के अलावा आवास निर्माण तथा सामाजिक वानिकी को शामिल किया गया। जवाहर रोज़गार योजना में सामुदायिक भवन, बारात घर आदि के निर्माण के ज़रिए देने की व्यवस्था की गई।

सोचिए और करिए 2

किसी ग्रामीण इलाके अथवा स्लम क्षेत्र में जाकर वहाँ चलाए गए ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के संबंध में जानकारी एकत्र कीजिए। एकत्र की गई सूचना के आधार पर ग्रामीण/स्थल क्षेत्र में ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रम के प्रभाव पर 20 पंक्तियों का नोट लिखिए। यदि संभव हो तो अपने नोट को अपने अध्ययन केंद्र के अन्य विद्यार्थियों द्वारा लिखे गए नोट से मिलाकर देखिए।

13.6.2 महिला, युवा एवं क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम

1980 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में प्रायोगिक तौर पर एक अन्य कार्यक्रम प्रारंभ किया गया, जिसका नाम था 'ग्रामीण महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम'। इस कार्यक्रम का उद्देश्य था, महिलाओं की आय बढ़ाना तथा उन्हें आय पैदा करने वाली गतिविधियाँ चलाने लायक बनाने के लिए आवश्यक सहायता और सेवाएँ उपलब्ध कराना। महिलाओं का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने के लिए रोज़गार लायक शिक्षा देने तथा स्वास्थ्य सुधार पर विशेष ध्यान दिया गया। छठी पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ में ग्रामीण युवा स्व-रोज़गार प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चलाया गया। यह कार्यक्रम ग़रीबी की रेखा से नीचे के परिवारों के 18 से 35 वर्ष के युवाओं के लिए था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत हर साल प्रत्येक खंड के 40 युवकों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य था। इसके लिए चुने गए युवकों को छात्रवृत्ति मिलती थी। युवकों को भौगोलिक आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशिक्षण देने के प्रयास भी किए गए।

कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं, जिन पर प्रकृति की विशेष कृपा नहीं हुई। जैसे सूखाग्रस्त क्षेत्र, रेगिस्तानी तथा पर्वतीय क्षेत्र आदि। ऐसे इलाकों में लोगों की आमदनी में काफी उतार-चढ़ाव रहता है। इन क्षेत्रों के निर्धन लोगों की मदद के लिए कई कार्यक्रम चलाए गए हैं। उदाहरण के लिए, सूखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम के अंतर्गत आने वाले इलाकों में बागवानी, कृषि, पशु-पालन, रेशम उत्पादन जैसे कार्यक्रम चलाए गए। इसी प्रकार, रेगिस्तानी इलाकों में वृक्षारोपण, पशुपालन, भूमिगत जल का उपयोग संबंधी कार्यक्रम हाथ में लिए गए।

शहरी इलाकों में स्लम क्षेत्रों में मुख्य रूप से पर्यावरण सुधार पर ध्यान दिया गया। बुनियादी सुविधाओं, सड़कों, पैदल चलने के रास्तों, जल आपूर्ति आदि के लिए प्रति व्यक्ति प्रतिमाह 300 रुपये की दर से सहायता उपलब्ध कराई गई।

कार्यक्रमों का यह ब्यौरा बहुत सतही है। हमारा उद्देश्य निर्धनता की समस्या से निपटने के प्रति सरकार के दृष्टिकोण से संबंध में सामान्य जानकारी देना मात्र है। इन कार्यक्रमों की उपलब्धियों के मूल्यांकन के लिए अनेक अध्ययन हुए हैं। इन अध्ययनों में से अधिकतर की राय में स्थिति में कुछ सुधार हुआ है, किन्तु जो लक्ष्य तय किए गए, वास्तविक उपलब्धि उनसे काफी कम रही।

बोध प्रश्न 3

1) निर्धनता तथा उसके परिणामों की व्याख्या कीजिए। अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) किसी ग़रीबी उन्मूलन कार्यक्रम का वर्णन कीजिए। अपना उत्तर पाँच-सात पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

13.7 सारांश

निर्धनता के वैचारिक तथा व्यावहारिक दोनों पक्ष प्रस्तुत करने के उद्देश्य से इकाई को विभिन्न भागों में विभाजित किया गया है। निर्धनता की परिभाषा में यह भी बताया गया है कि ग़रीबी का आकलन कैसे किया जाता है निर्धनता के कारणों तथा परिणामों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस इकाई में अंतिम भाग में भारत में ग़रीबी की व्यापकता तथा उसे दूर करने की नीतियाँ और कार्यक्रमों का संक्षेप में उल्लेख किया गया है। निर्धनता पर प्राय: आर्थिक दृष्टि से विचार किया जाता है। इस इकाई में यह भी बताया गया है कि ग़रीबी के कई आयाम हैं। यहाँ विशेष बल निर्धनता के समाजशास्त्रीय पहलू पर दिया गया है। इसलिए निर्धनता की समस्याओं को हल करने के लिए बहु-आयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। यहाँ इन पर भी चर्चा की गई है।

13.8 शब्दावली

चरम निर्धनता (Absolute Poverty) : चरम निर्धनता का अर्थ उस व्यक्ति या परिवार की अक्षमता से है, जो जीवन की बुनियादी आवश्यकताएँ जुटा पाने में अक्षम हो।

क्षेत्रीय कार्यक्रम (Area Programme) : ऐसे अनेक क्षेत्र हैं, जिन पर प्रकृति की कृपा नहीं है। इन क्षेत्रों के निर्धन लोगों की सहायता के लिए विभिन्न कार्यक्रम चलाए गए हैं।

निर्धनता (Poverty) : इसकी परिभाषा विभिन्न रूपों में की गई है, मुख्यतया ग़रीबी की रेखा के रूप में, जिससे नीचे रहने वाले व्यक्ति को निर्धन माना जाता है। अब इसमें राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय पहलुओं पर भी ध्यान दिया गया है।

तुलनात्मक निर्धनता (Relative Poverty) : इस अवधारणा के अनुसार निर्धनता का आकलन निश्चित समय एवं स्थान के जीवन के स्तर के आधार पर किया जाता है।

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) निर्धनता की परिभाषा "ग़रीबी की रेखा" के संदर्भ में की जाती है। इस रेखा से नीचे रहने वाले लोग ग़रीब माने जाते हैं। इसमें एक दोष यह है कि ग़रीबी की रेखा का निर्धारण इकतरफा तौर पर किया जाता है। इसलिए इसके औचित्य पर आपत्ति की जा सकती है। फिर भी, इससे यह निर्धारित करने का एक तरीका तो मिलता ही है कि ग़रीब कौन है।

2) निर्धनता के प्रति न्यूनतम दृष्टिकोण है सभी निर्धन लोगों का न्यूनतम जीवन स्तर ऊपर उठाने का प्रयास करना। इसमें लोगों में आत्म-सम्मान बढ़ाना, सामाजिक गतिशीलता तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी बढ़ाने का प्रयास शामिल है।

बोध प्रश्न 2

1) निर्धनता के अनेक कारण हैं। इनमें पहला कारण है किसी समाज में सम्पदा के वितरण में विषमता। दूसरा है, दुष्चक्र सिद्धांत जिसके अनुसार ग़रीब लोग धन की कमी के कारण ग़रीब बने रहते हैं। अंतिम कारण है, भौगोलिक पहलू जिसके अनुसार लोग जिन क्षेत्रों में रहते हैं, वे अनुत्पादक हैं, जिस कारण वे निर्धनता के शिकार होते हैं।

2) निर्धनता के अनेक कार्य हैं। ये इस प्रकार हैं :

   i) इससे गंदे कार्यों का सम्पन्न होना सुनिश्चित बनता है।

   ii) ग़रीब लोग घटिया सामान खरीदते हैं तथा घटिया सेवाओं में लगाए जा सकते हैं।

   iii) इससे सम्पन्न लोगों का जीवन सुखी बनाने में मदद मिलती है।

   iv) निर्धनता से ऐसा वर्ग पनपता है, जो परिवर्तन के आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों को आत्मसात कर लेता है।

बोध प्रश्न 3

1) निर्धनता के कई परिणाम हैं। इनमें से एक परिणाम है निर्धनता की संस्कृति। इस संस्कृति में ग़रीब लोग शोचनीय स्थितियों में रहना सीखते हैं। उनकी यह उप-संस्कृति उस समाज की संस्कृति से भिन्न होती है, जिसमें वे रहते हैं। उसके अलावा निर्धन लोग प्राय: ग़रीबी की रेखा से नीचे जीवन बिताते हुए सामाजिक दृष्टि से अलग-थलग होते जाते हैं।

2) एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम 1970 के दशक के अंत में चलाया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि तथा भूमि से जुड़े अन्य क्षेत्रों में उत्पादकता बढ़ाना था। इसमें समाज के कमज़ोर वर्गों की आय तथा साधनों में वृद्धि का भी प्रावधान किया गया था।